पाठ - 3

ब्रिटिश शासन के विरूद्ध संघर्ष

आइए जानें–

- ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध प्रारम्भिक वर्षों में कौन-कौन से विद्रोह हुए?
- सन् 1857 के स्वतंत्रता संग्राम के क्या कारण थे एवं यह आंदोलन क्यों असफल हुआ?

भारत में अंग्रेजी शासन की स्थापना के साथ ही उसका विरोध आरंभ हो गया था। ईस्ट इण्डिया कम्पनी की राजनीतिक एवं आर्थिक नीतियों के परिणामों से असंतुष्ट समाज के अनेक वर्गों, पदच्युत शासकों, जमींदारों, धार्मिक नेताओं, फकीरों, सन्यासियों, सैनिकों, किसानों एवं जनजातियों ने अनेक बार विद्रोह किए। अंग्रेजों के शासन के विरुद्ध सबसे बड़ा संघर्ष 1857 में हुआ, इसे प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के नाम से जाना जाता है।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासन के 100 वर्षों के भीतर तथा 1857 ई. के स्वतंत्रता संग्राम से पहले भारत में अनेक विद्रोह हो चुके थे। जिसमें बंगाल के गिरि सम्प्रदाय के सन्यासियों का विद्रोह, अहोम विद्रोह, असम और सिलहट में खासी विद्रोह, मद्रास में विजयनगरम् के राजा का विद्रोह, किसान आंदोलन में रंगपुर का विद्रोह, करैजी आंदोलन, वहाबी आंदोलन प्रमुख थे। इसी प्रकार आदिवासियों के आंदोलनों में चुआर और हो विद्रोह, कोल विद्रोह, संथाल विद्रोह प्रमुख थे।

सैनिक विद्रोह में 1806 ई. में बैल्लौर का विद्रोह, 1824 ई. में बैरकपुर विद्रोह, 1825 ई. में असम के तोपखाने में विद्रोह, 1838 ई. का शोलापुर विद्रोह, और 1849-50 ई. गोविंदगढ़ रेजिमेन्ट का विद्रोह प्रमुख थे।

बंगाल में कम्पनी के शासन की स्थापना के साथ ही जनता के शोषण की जो प्रक्रिया आरंभ हुई थी, उसका प्रभाव पुराने जमींदारों, किसानों, कारीगरों और सैनिकों पर पड़ा। कम्पनी की सरकार ने इनका आर्थिक शोषण किया, जिसके फलस्वरूप अपने हितों की सुरक्षा के लिए शासकों एवं बड़े ताल्लुकदारों ने विद्रोह का सहारा लिया।

किसान आंदोलनों को भारत के इतिहास में व्यापक महत्व प्राप्त हैं। सरकार की आर्थिक नीतियों एवं नई भू-राजस्व व्यवस्था की हानि सबसे अधिक किसानों को उठानी पड़ी थी। उन्हें कम्पनी तथा जमींदार दोनों के अत्याचारों का सामना करना पड़ा था। भूख, दरिद्रता और शोषण से पीड़ित किसानों ने अनेकों बार विद्रोह किये थे। इन विद्रोह के प्रमुख केन्द्र पूर्वी बंगाल, मद्रास, महाराष्ट्र, गुजरात आदि थे। इन विद्रोहों का मुख्य उद्देश्य आर्थिक शोषण से छुटकारा एवं लगान में रियायत पाना था।

शिक्षण संकेत -

- प्रारम्भिक विद्रोहों को पढ़ाते समय भारत के मानचित्र में उन स्थलों को बताएँ, जहाँ वे हुए थे।

सन्यासी विद्रोह

नागरिक विद्रोह में सबसे महत्वपूर्ण बंगाल के सन्यासियों का विद्रोह था। 1770 ई. में बंगाल में पड़े अकाल ने वहाँ की जनता को आर्थिक रूप से कंगाल कर दिया। अंग्रेजी सरकार की उदासीनता, आर्थिक लूट और तीर्थ स्थानों पर लगे प्रतिबंधों ने सदैव से शान्त सन्यासियों को भी विद्रोह करने के लिए विवश कर दिया। उन्होंने आम जनता के साथ मिलकर कम्पनी सरकार की कोठियों, बस्तियों और किलों पर आक्रमण कर दिया। कम्पनी सरकार के गवर्नर वारेन हेस्टिंग्ज के अथक प्रयासों के बाद ही सन्यासी विद्रोह को शांत किया जा सका। सन्यासी विद्रोह का उल्लेख बंकिमचन्द्र चटर्जी ने अपनी पुस्तक 'आनन्दमठ' में किया है।

चुआर विद्रोह

अकाल, भूमिकर में वृद्धि तथा अन्य अनेक आर्थिक संकटों के कारण मिदनापुर जिले की आदिम जाति के चुआर लोगों ने अंग्रेजी शासन के विरूद्ध हथियार उठा लिए। दलभूमि, कैलापाल ढोतका तथा बाराभूमि के राजाओं ने मिलकर 1768 ई. में विद्रोह किया। यह क्षेत्र 18वीं शताब्दी के अंतिम दिनों तक उपद्रव ग्रस्त रहा।

हो तथा मुण्डा का विद्रोह

छोटा नागपुर तथा सिंहभूमि जिले में रहने वाली हो तथा मुण्डा जाति के लोगों ने कम्पनी सरकार के विरूद्ध विद्रोह कर दिया। आदिवासियों ने अपने क्षेत्र में अंग्रेजी प्रशासन के विस्तार का विरोध किया। बंगाल के पाराहार के राजा जगन्नाथ ने विद्रोहियों का साथ दिया। एक लम्बे संघर्ष के बाद ही विद्रोह को दबाया जा सका था।

कोल विद्रोह

छोटा नागपुर के कोलों ने उस समय विद्रोह किया, जब उनकी भूमि को मुस्लिम तथा सिख कृषकों को दे दिया गया। इस विद्रोह का एक अन्य कारण भूमि प्रबंध, लगान वसूली का तरीका एवं साहूकारी व्यवस्था थी। नाराज कोलों ने 1831 ई. के आस-पास सिंहभूमि, राँची, पलामू, हजारी बाग, मानभूमि आदि स्थानों पर विद्रोह कर दिया। इस संघर्ष में आदिवासी नेता बुद्धों भगत, उसके पुत्र एवं लगभग 150 अन्य आदिवासी मारे गए। दीर्घकालीन सैन्य अभियान के बाद ही विद्रोह को दबाया जा सका।

संथाल विद्रोह

आदिवासियों द्वारा कम्पनी शासन के विरूद्ध किये गये विद्रोह में सबसे सशक्त विद्रोह संथालों का था। भागलपुर से लेकर राजमहल के बीच का क्षेत्र दामन-ए-कोह के नाम से जाना जाता था। यह संथाल बहुल क्षेत्र था। संथालों ने भूमिकर अधिकारियों के दुर्व्यवहार के विरूद्ध विद्रोह किया। यह विद्रोह संथाल नेता सीदो तथा कान्हू के नेतृत्व में आरंभ हुआ। इन्होंने अपने क्षेत्रों में कम्पनी के शासन के अंत की घोषणा कर दी। एक कड़े संघर्ष के बाद 1856 ई. में ही इस विद्रोह को दबाया जा सका।

अहोम विद्रोह

1828 ई. में अंग्रेज शासन ने अहोम प्रदेश को अंग्रेजी राज में मिलाने का प्रयास किया। परिणाम स्वरूप अहोम लोगों ने गोमधर कुंवर को अपना राजा घोषित कर दिया और रंगपुर पर चढ़ाई कर दी। अंग्रेजी सेनाओं के समक्ष अहोम पराजित हुए।

खासी विद्रोह

अंग्रेज प्रशासन ने खासी पहाड़ी तथा सिलहट को अपने अधिकार में लेकर सड़क बनाने का निश्चय किया, जिससे खासी जाति नाराज हो गई। उन्होंने राजा तीरथसिंह के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया। खासी नेता वारमानिक तथा मुकुन्दसिंह ने अंग्रेजी सेना का डटकर विरोध किया, मगर 1833 ई. में पराजित हुए।

भील विद्रोह

भारत के पश्चिमी क्षेत्र में भील आदिम जाति निवास करती थी। अंग्रेजी शासन की कृषि नीति तथा उनके प्रशासन से उत्पन्न भय के फलस्वरूप भीलों ने विद्रोह कर दिया। अंग्रेजी शासन का कहना था कि भीलों के विद्रोह को पेशवा बाजीराव द्वितीय तथा त्रिम्बकजी ने प्रोत्साहित किया था। यह संघर्ष 1812 से 1846 ई. तक चला।

कच्छ का विद्रोह

कच्छ तथा काठियावाड़ के राजा भारमल्ल को हराकर अंग्रेजों ने उनके अल्पवयस्क पुत्र को सिंहासन पर बैठा दिया और अपनी इच्छा से ये राज्य का शासन चलाने लगे। परिणामस्वरूप भारमल्ल के समर्थकों ने अंग्रेजी शासन के विरूद्ध विद्रोह कर दिया। यह विद्रोह 1819 से 1831 ई. तक चला।

रामोसी विद्रोह

पश्चिम घाट में बसने वाली एक आदिम जाति रामोसी ने अंग्रेजी प्रशासन के विरूद्ध 1822 ई. में अपने सरदार चित्तर सिंह के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया। उन्होंने सतारा के आसपास का क्षेत्र लूट लिया।

दीवान बेला टम्पी का विद्रोह

वेलेजली ने ट्रावनकोर के महाराजा के साथ 1805 ई. में सहायक सन्धि की थी। ट्रावनकोर का राजा सन्धि की शर्तों से असंतुष्ट था, इसलिए उसने कर देने से इंकार कर दिया। अंग्रेजों के दबाव डालने पर दीवान वेला टम्पी ने विद्रोह कर दिया, जिसे नायर बटालियन ने समर्थन दिया। इस विद्रोह को अंग्रेजों ने कुचल दिया।

वहाबी आंदोलन

अंग्रेजी प्रभुसत्ता को सबसे गम्भीर चुनौती वहाबी आंदोलन से मिली, वहाबी आंदोलन 19वीं शताब्दी के चौथे दशक से सातवें दशक तक चला। रायबरेली के सैय्यद अहमद इसके प्रवर्तक थे। वह इस्लाम में किसी भी परिवर्तन एवं सुधारों के विरूद्ध थे। सैय्यद अहमद ने पंजाब में सिक्ख राज्य के

विरूद्ध विद्रोह कर दिया और 1849 ई. में पंजाब पर कम्पनी के अधिकार से वहाबी आंदोलन अंग्रेजों के विरूद्ध हो गया।

1857 ई. के पूर्व होने वाले विद्रोह यद्यपि असफल हो गए, लेकिन इन्होंने जनता में नई चेतना जाग्रत कर दी थी। इनसे किसानों और निम्न वर्गों की दयनीय स्थिति की ओर सबका ध्यान जाग्रत हुआ था। असंतोष की भावना ने समाज के अधिकांश वर्गों में विकराल रूप धारण कर लिया, जिसका परिणाम 1857 ई. का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम था।

सन् 1857 ई. का स्वतंत्रता संग्राम

भारतीय इतिहास में 1857 ई. का वर्ष अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस वर्ष ब्रिटिश राज के विरूद्ध सबसे बड़े सशस्त्र आंदोलन का आरंभ 10 मई, 1857 के दिन मेरठ के सिपाहियों की बगावत से हुआ। दूसरे दिन वे सिपाही दिल्ली पहुँचे। दिल्ली के सिपाही भी उनसे मिल गए। दिल्ली पर उनका कब्जा हो गया। अस्सी साल के वृद्ध बादशाह बहादुरशाह जफर को भारत का बादशाह घोषित किया गया। ब्रिटिश शासन के खिलाफ लंबे समय से जो असंतोष पनप रहा था, वह स्वतंत्रता संग्राम के रूप में भड़क उठा। सिपाहियों से शुरू हुआ आंदोलन दावानल की तरह जल्दी ही देश के एक बड़े भाग में फैल गया।

सन् 1857 ई. की घटना ब्रिटिश शासन के खिलाफ सबसे बड़ी घटना थी। अनेक दृष्टियों से भारतीय इतिहास में यह एक अभूतपूर्व घटना थी। इसमें ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकने के उद्देश्य से देश के विभिन्न प्रदेशों के सैनिक और विभिन्न राज्यों के शासक व सरदार लड़ाई के लिए एकजुट हुए। समाज के कई अन्य समुदाय-जमींदार, किसान, दस्तकार, विद्वान इस आंदोलन में शामिल हुए। सब का एक समान उद्देश्य था- ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकना। यह संघर्ष काफी व्यापक पैमाने पर हुआ, अतः इसे प्रथम भारतीय स्वातंत्र्य संघर्ष माना जाता है।

ब्रिटिश शासन के प्रति असंतोष

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, अंग्रेजों की राज्य-विस्तार नीति के कारण भारत के अनेक शासकों और सरदारों में उनके प्रति असंतोष व्याप्त हो गया था। अंग्रेजों ने उनके साथ सहायक-संधि कर ली थी। मगर अंग्रेज इन संधियों को मनमर्जी से तोड़ देते थे। सिंध, पंजाब और अवध को अंग्रेजों ने हथिया लिया था। इससे काफी असंतोष फैला था। डलहौजी ने 'विलय नीति' को कड़ाई से लागू किया, तो असंतोष और भी अधिक बढ़ गया। झाँसी के निःसंतान मृत राजा के दत्तक पुत्र को डलहौजी ने उत्तराधिकारी नहीं माना और 1854 ई. में झाँसी के राज्य पर कब्जा कर लिया। उसके पहले 1851 ई. में पेशवा बाजीराव द्वितीय की मृत्यु हुई, तो उसके दत्तक पुत्र नाना साहब को पेशवा के रूप में मिलने वाली पेंशन देने से अंग्रेजों ने इन्कार कर दिया। खुद मुगल बादशाह को कह दिया गया कि उसके बाद उसके उत्तराधिकारियों को बादशाह नहीं माना जाएगा। इन कार्रवाइयों से कमजोर हो चुके शासक-परिवारों में घबराहट और भय फैल गया।

अंग्रेजों ने उन सरदारों और जमींदारों की शक्ति को नष्ट करने की नीति अपनाई जिनके इलाकों पर उन्होंने कब्जा कर लिया था। उनमें से कइयों की जमीन छीन ली गई। अंग्रेजों ने भू-राजस्व की नई व्यवस्था लागू की, तो भूस्वामियों के पुराने परिवारों के अधिकार खत्म हो गए। किसी भी राज्य पर कब्जा करने के बाद उसकी पुरानी प्रशासन-व्यवस्था खत्म कर दी जाती थी। तब पुरानी प्रशासन-व्यवस्था से जुड़े हुए व्यक्ति बेरोजगार हो जाते थे। जिन राज्यों पर कब्जा किया गया था, उनके न केवल शासक, बल्कि सैनिक, कारीगर तथा कृषक जैसे हजारों अन्य लोग भी प्रभावित हुए थे।

किसानों और दस्तकारों की बरबादी

अंग्रेजों द्वारा लागू की गई भूमि-व्यवस्थाओं से किसानों की हालत बदतर हो गई थी। पुराने जमींदारों को हटा देने पर किसानों की स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ। कई मामलों में राजस्व की माँग में वृद्धि हुई, तो किसानों के कष्ट और बढ़ गए। जब इंग्लैण्ड में तैयार हुआ माल भारत में पहुँचने लगा, तो यहाँ के पुराने हस्तशिल्प बरबाद हो गए। पीड़ित किसान और कारीगर ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकने की लड़ाई में कूद पड़े।

धर्म और जाति के नष्ट होने का डर

अंग्रेजों की नीति और आचरण ने जनता में यह भय पैदा कर दिया था कि ब्रिटिश शासन उनके धर्म जाति तथा रीति-रिवाजों को नष्ट कर देने पर तुला हुआ है। जनता को लगा कि ब्रिटिश सरकार उन्हें ईसाई बनाना चाहती है। कुछ ईसाई धर्म-प्रचारकों ने हिंदू और इस्लाम धर्म की तथा जनता के पुराने रीति-रिवाजों की खुले-आम निंदा की। ब्रिटिश सरकार ने सामाजिक सुधार के कुछ कदम उठाए थे। उनसे लोगों का भय और भी अधिक बढ़ गया था। अंग्रेजों ने अनेक मामलों में जाति-नियमों की उपेक्षा की थी। उदाहरण के लिए फौजों, जेलों और रेलयात्राओं के मामलों में। नई शिक्षण संस्थाओं को, जिनमें से अनेक की स्थापना ईसाई धर्म-प्रचारकों ने की थी, संदेह की नजर से देखा जाता था। चूँकि ये सब नई बातें अंग्रेजों ने शुरू की थीं, इसलिए ये लोगों को अमान्य थीं, अतः अनेक लोग अपने धर्म के नाम पर ब्रिटिश शासन के खिलाफ विद्रोह में शामिल हुए। कई मौलवियों ने पहले अंग्रेजों के खिलाफ जेहाद (धर्मयुद्ध) का नारा दिया था। ब्रिटिश सरकार ने लोगों की धार्मिक भावनाओं की उपेक्षा की। अंततः धर्म नष्ट हो जाने का भय आंदोलन भड़कने का तात्कालिक कारण बना।

भारतीय सैनिकों की शिकायतें

ब्रिटिश सरकार की भारतीय फौजों में आठ में से सात भारतीय सैनिक होते थे। देश में फैलते असंतोष का इन सैनिकों पर असर होना स्वाभाविक था। भारत के पुराने शासक-परिवारों के साथ हुए अन्याय को उन्होंने भी अनुभव किया। आम जनता द्वारा भोगे जा रहे कष्टों से सैनिक भी सीधे प्रभावित हुए, क्योंकि वे भारतीय समाज के अभिन्न अंग थे। इसके अलावा, भारतीय सिपाहियों की अपनी भी कुछ खास शिकायतें थीं, जिनके कारण वे विद्रोह के अगुआ बने।

अंग्रेजों की फौज में भारतीय सिपाहियों के लिए पदोन्नति के रास्ते बंद थे। फौज में ऊँचे ओहदे अंग्रेज अफसरों के लिए सुरक्षित थे। भारतीय और अंग्रेज सैनिकों के वेतनों में बड़ा अंतर था। अंग्रेज अफसर भारतीय सिपाहियों को नफरत की निगाह से देखते थे। लड़ाई में जाने पर भारतीय सैनिकों को अतिरिक्त भत्ता मिलता था। लड़ाई खत्म होने पर और उनके सहयोग से जीते गए इलाके पर अंग्रेजों का कब्जा हो जाने के बाद भारतीय सैनिकों का भत्ता बंद कर दिया जाता था। उसी दौरान सैनिकों को एक नए प्रकार की राइफल दी गई। इसकी कारतूसों में गाय और सुअर की चर्बी लगाई जाती थी। राइफल में कारतूस भरने के पहले उस पर लगे कागज को दांतों से काटना पड़ता था। चर्बी वाले इन कारतूसों के इस्तेमाल से हिंदू और मुसलमान सैनिकों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँची। यही बात स्वतंत्रता संग्राम का तात्कालिक कारण बनी। सैनिकों ने कारतूस भरने से इन्कार कर दिया, तो मेरठ में 85 भारतीय सैनिकों को जेल की लंबी सजा सुनाई गई। तब 10 मई, 1857 को मेरठ के सैनिकों ने विद्रोह कर दिया। दो महीने पहले बैरकपुर में मंगल पांडे ने नए कारतूसों का इस्तेमाल करने से इन्कार कर दिया तो उसे मार दिया गया। यहीं से आंदोलन प्रारंभ हो गया।

आंदोलनकारी सेना ने दिल्ली पर कब्जा कर लिया। उसने बहादुरशाह जफर को भारत का बादशाह घोषित कर दिया। उसके बाद क्रांति देश के अन्य भागों में भी फैल गई। जिस मुगल बादशाह की कोई साख नहीं रह गई थी वह एकाएक उन सबके लिए एकता का प्रतीक बन गया जो विदेशी शासन को उखाड़ फेंकना चाहते थे। जिन क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर आंदोलन नहीं हुए वहाँ अशांति फैलने के कारण अंग्रेज घबरा गए। असम, उड़ीसा, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार, सिंध, राजस्थान, महाराष्ट्र, हैदराबाद, पंजाब और बंगाल में आन्दोलन हुए। इनमें से कुछ जगहों में आन्दोलन स्थानीय या फौजी बैरकों तक सीमित रहा और उसे आसानी से दबा दिया गया। कई जगहों में अंग्रेजों ने खतरे को टालने के लिए भारतीय सिपाहियों से उनके हथियार छीन लिए।

दिल्ली, अवध, रूहेलखंड, बुंदेलखण्ड, इलाहाबाद के आसपास के इलाकों, आगरा, मेरठ और पश्चिमी बिहार में आंदोलन काफी व्यापक और भयंकर था। इन इलाकों में लोगों ने भारी संख्या में क्रांति में भाग लिया और भयंकर लड़ाइयाँ लड़ीं। बिहार में आंदोलन का नेतृत्व कुंवरसिंह ने किया। वहाँ आंदोलनकारियों ने बिहार के कई हिस्सों को स्वतंत्र किया और वह लखनऊ तथा कानपुर में आंदोलनकारियों की सहायता के लिए आई। दिल्ली में विद्रोही सेना का मुख्य सेनापति बख्त खाँ था। कानपुर में आंदोलनकारियों ने नाना साहब को पेशवा घोषित कर दिया और अजीमुल्ला उसका मुख्य सलाहकार बना। नाना साहब के सैनिकों का नेतृत्व तात्या टोपे कर रहा था। वह एक बहादुर और योग्य नेता था। झाँसी में दिवंगत राजा की विधवा रानी लक्ष्मीबाई को शासक घोषित कर दिया गया।

चित्र-4 : तात्या टोपे

उन्होंने लड़ाई में बड़ी बहादुरी से अंग्रेजों का मुकाबला किया। लुधियाना की सिक्ख रेजिमेंट के सैनिक पूर्वी उत्तरप्रदेश के आंदोलनकारियों से जा मिले। ब्रिटिश फौज ने गोरखपुर और आजमगढ़ से पलायन किया। जुलाई के शुरू में वाजिद अली शाह के नौजवान बेटे बिरजिस कादर को अवध की गद्दी पर बिठाया गया। उसकी माँ हजरत महल उसकी ओर से शासन करने लगी। मौलवी अहमदुल्ला के नेतृत्व में लखनऊ की रेसीडेंसी को घेर लिया। यह घेरा कई महीनों तक रहा।

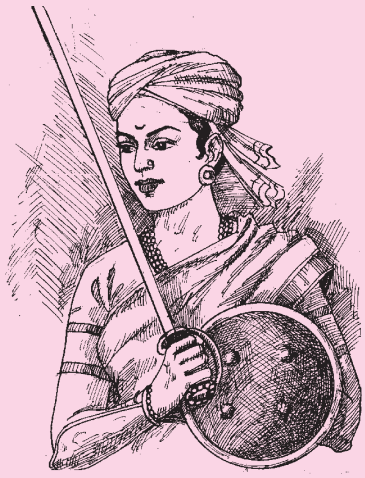

चित्र-5 : महारानी लक्ष्मीबाई

आंदोलन का दमन

आंदोलन के समय हिंदू और मुसलमान कंधे से कंधा मिलाकर लड़े। अंग्रेजों ने हिन्दुओं और मुसलमानों को एक-दूसरे से लड़ाने की कोशिश की। उदाहरण के लिए उन्होंने बरेली में खान बहादुर खाँ के नेतृत्व के खिलाफ हिन्दुओं को लड़ाने के लिए 50,000 रूपए मंजूर किए। मगर ऐसी तमाम कोशिशें बेकार रहीं। आंदोलन के नेताओं ने बहादुरशाह को हिंदुस्तान का बादशाह माना। वह विदेशी शासन को उखाड़ फेंकने के लिए संघर्ष कर रही समस्त जनता के लिए एकता का प्रतीक बन गया। किंतु आंदोलन का व्यापक स्वरूप होने पर भी एक साल से कुछ अधिक समय बाद ही कुचल दिया गया। सितंबर 1857 में अंग्रेजों ने दिल्ली पर पुनः कब्जा कर लिया। बहादुरशाह को बंदी बनाया गया। उस पर अभियोग चला कर रंगून (म्यांमार) निर्वासित कर दिया। वहीं पर 1862 ई. में उसकी मृत्यु हुई। सितंबर 1858 ई. में लखनऊ पर ब्रिटिश सैनिकों का कब्जा हो गया। मगर बेगम हजरतमहल ने समर्पण करने से इन्कार कर दिया। वह नेपाल चली गईं। झाँसी की रानी ने तात्याटोपे के साथ अंग्रेजों का सामना किया, किन्तु 3 अप्रैल 1858 को अंग्रेज सेनाधिकारी रोज ने झाँसी पर अधिकार कर लिया। रानी लक्ष्मीबाई व तात्याटोपे 4 अप्रैल को कालपी पहुँचे, किन्तु मई 1858 ई. में कालपी पर भी अंग्रेजों की सेना ने अधिकार कर लिया। रानी लक्ष्मीबाई व अन्य नेताओं ने ग्वालियर के किले पर अधिकार कर लिया। जून 1858 में ग्वालियर पर अंग्रेजों ने अधिकार करने का प्रयास किया। रानी लक्ष्मीबाई ने अत्यन्त वीरतापूर्वक अंग्रेजों का सामना किया व वीरगति प्राप्त की। तात्या टोपे मध्यप्रदेश और राजस्थान में अंग्रेजों से दो साल तक लड़ते रहे। एक मित्र के विश्वासघात के कारण वह अंग्रेजों के कब्जे में आ गए। उन्हें फाँसी दे दी गई। अप्रैल 1858 में गंभीर रूप से घायल होने के बाद कुँवरसिंह की भी मृत्यु हो गई। 1858 ई. के अंत तक आंदोलन को कुचल दिया गया था, मगर पुनः शांति स्थापित करने में अंग्रेजों को कई साल लगे।

आंदोलन के दमन के दौरान और उसके बाद ब्रिटिश सैनिकों ने आंदोलनकारी नेताओं, सैनिकों और आम जनता के साथ अमानवीय व्यवहार किया। विजयी ब्रिटिश सैनिकों ने बड़े पैमाने पर अत्याचार किए और बड़ी संख्या में लोगों को मौत के घाट उतार दिया। बहुत से गाँवों को मिट्टी में मिला दिया। शहरों को आंदोलनकारियों के कब्जे से मुक्त करने के बाद ब्रिटिश सैनिकों ने उन्हें खूब लूटा। अनुमान

लगाया गया है कि अकेले अवध में करीब 1,50,000 लोगों की हत्याएँ हुईं। बहुत बड़ी संख्या में आंदोलनकारियों को फाँसी पर चढ़ाया गया और दूसरों को अमानवीय यातनाएँ दी गईं।

स्वतंत्रता संग्राम की असफलता के कारण

सन् 1857 के आंदोलन का भारतीय इतिहास में गौरवशाली अध्याय है। पहली बार देश के विभिन्न भागों के बीच एक ऐसे शासन के खिलाफ एकता स्थापित हुई, जो सबका शत्रु था। आंदोलन में अनेक नेता और योद्धा उभरे जिनकी वीरता तथा बहादुरी ने उन्हें अमर बना दिया। रानी लक्ष्मीबाई, कुँवर सिंह, तात्या टोपे और बख्त खाँ– जैसे नेताओं की वीरता आगे की पीढ़ियों के लिए प्रेरणा तथा देशप्रेम का स्रोत बनीं।

लेकिन आंदोलन में कुछ बुनियादी कमजोरियाँ थीं, जिनके कारण उसके सफल होने की कम उम्मीद थी। विद्रोह का नेतृत्व राजाओं और जमींदारों के हाथों में था। उनमें से अनेक आंदोलन में इसलिए शामिल हुए थे, क्योंकि ब्रिटिश शासन उनके अस्तित्व के लिए खतरा बन गया था। स्वतंत्रता संग्राम के नेता यद्यपि विदेशी शासन को उखाड़ फेंकने के लिए लड़ रहे थे, मगर वे पुरानी व्यवस्था को पुनः स्थापित करना चाहते थे।

आंदोलन को व्यापक स्वरूप आम जनता–सैनिकों, किसानों, दस्तकारों आदि के सक्रिय सहयोग से प्राप्त हुआ था। मगर जनता एक स्वतंत्र नेतृत्व कायम नहीं कर पाई। उस समय भारत में राजनीतिक चेतना की कमी थी, साथ ही राजनीतिक एकता का अभाव था।

स्वतंत्रता संग्राम की कई अन्य कमजोरियाँ थीं। मुगल बादशाह को आंदोलनकारियों ने भारत का सम्राट मान लिया था और ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकने के उद्देश्य से सभी आंदोलनकारी एकजुट नहीं हो पाए थे। अधिकतर आंदोलनकारी अपने खास इलाकों में लड़ते रहे। विभिन्न क्षेत्रों में लड़ रही शक्तियों के बीच ठीक से कोई तालमेल नहीं था। इसके अलावा, जिन राजाओं और सरदारों को अंग्रेजों ने पदच्युत नहीं किया था उनमें से बहुतों ने आंदोलन के दौरान अंग्रेजों का साथ दिया। ब्रिटिश शासन के प्रति सब जगह तीव्र असंतोष भी नहीं था। उदाहरण के लिए, कई साल की लड़ाई के बाद पंजाब में अंग्रेजों ने व्यवस्थित प्रशासन कायम किया था। वहाँ लोग उत्तर भारत के अन्य भागों की तरह असंतुष्ट नहीं थे। इसलिए आंदोलनकारियों के प्रति सहानुभूति होते हुए भी पंजाब में बड़े पैमाने पर कोई संघर्ष नहीं हुआ।

सन् 1857 के स्वतंत्रता संग्राम के साथ भारतीय इतिहास का एक युग समाप्त हो गया। अठारहवीं सदी की भारतीय राजनीतिक व्यवस्था को अंततः पूरी तरह खत्म कर दिया गया। जिन भारतीय राज्यों पर अंग्रेजों का कब्जा नहीं हुआ था उन्हें कायम रहने दिया गया, मगर उनकी स्वतंत्रता खत्म हो गई। व्यावहारिक रूप में वे ब्रिटिश राज्य के अंग बन गए। आंदोलन के पश्चात कंपनी का शासन खत्म हो गया और ब्रिटिश सरकार ने भारतीय साम्राज्य पर सीधे शासन करना प्रारंभ कर दिया। भारत के प्रति ब्रिटिश शासकों की नीतियों तथा भावनाओं में अनेक परिवर्तन हुए। इन परिवर्तनों के बारे में तुम पाठ क्र. 8 में पढ़ोगे।

अभ्यास प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प चुनकर लिखिए –

1. कौन सा विद्रोह आदिवासी विद्रोह नहीं था –
   क. वेल्लोर विद्रोह　　ख. भील विद्रोह
   ग. संथाल विद्रोह　　ग. मुण्डा विद्रोह
2. सन् 1857 ई. के स्वतंत्रता संग्राम में निम्नलिखित में से किसने भाग नहीं लिया –
   क. रानी लक्ष्मीबाई　　ख. तात्या टोपे
   ग. बहादुरशाह जफर　　घ. दिलीप सिंह
3. अंग्रेजों की किस नीति के कारण भीलों ने विद्रोह किया था –
   क. उद्योग नीति　　ख. कृषि नीति
   ग. धार्मिक नीति　　घ. राज्य में हस्तक्षेप

अति लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. सन्यासी विद्रोह का उल्लेख किस पुस्तक में मिलता है?
2. संथाल विद्रोह का नेतृत्व किसने किया था?
3. वहाबी आन्दोलन के प्रवर्तक कौन थे?

लघु उत्तरीय प्रश्न –

1. कोल विद्रोह कब और कहाँ हुआ था?
2. भारत के उन क्षेत्रों के नाम बताइए जहाँ सन् 1857 ई. का आन्दोलन काफी व्यापक था?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न –

1. संथाल विद्रोह का वर्णन कीजिए।
2. सेना के भारतीय सिपाहियों में असंतोष फैलने के क्या कारण थे?
3. सन् 1857 ई. के आन्दोलन की असफलता के मुख्य कारण क्या थे?
4. टिप्पणी लिखिए –　(1) सन्यासी विद्रोह　(2) वहाबी आन्दोलन

प्रायोजना कार्य–

- 1857 के स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व करने वाले नेताओं के चित्र एकत्र कर एलबम बनाइए।
- भारत के रेखा मानचित्र में 1857 के स्वतंत्रता आंदोलन के प्रमुख केन्द्रों को दर्शाइए।